श्री गुरुगीता

श्री कुलार्णव महातन्त्र से उद्धृत

भाषानुवादक

प्रो० भखन लाल कुकिलू

शास्त्री, साहित्याचार्य

ईश्वर आश्रम ट्रस्ट

इशबर, निशात, श्रीनगर (कश्मीर)

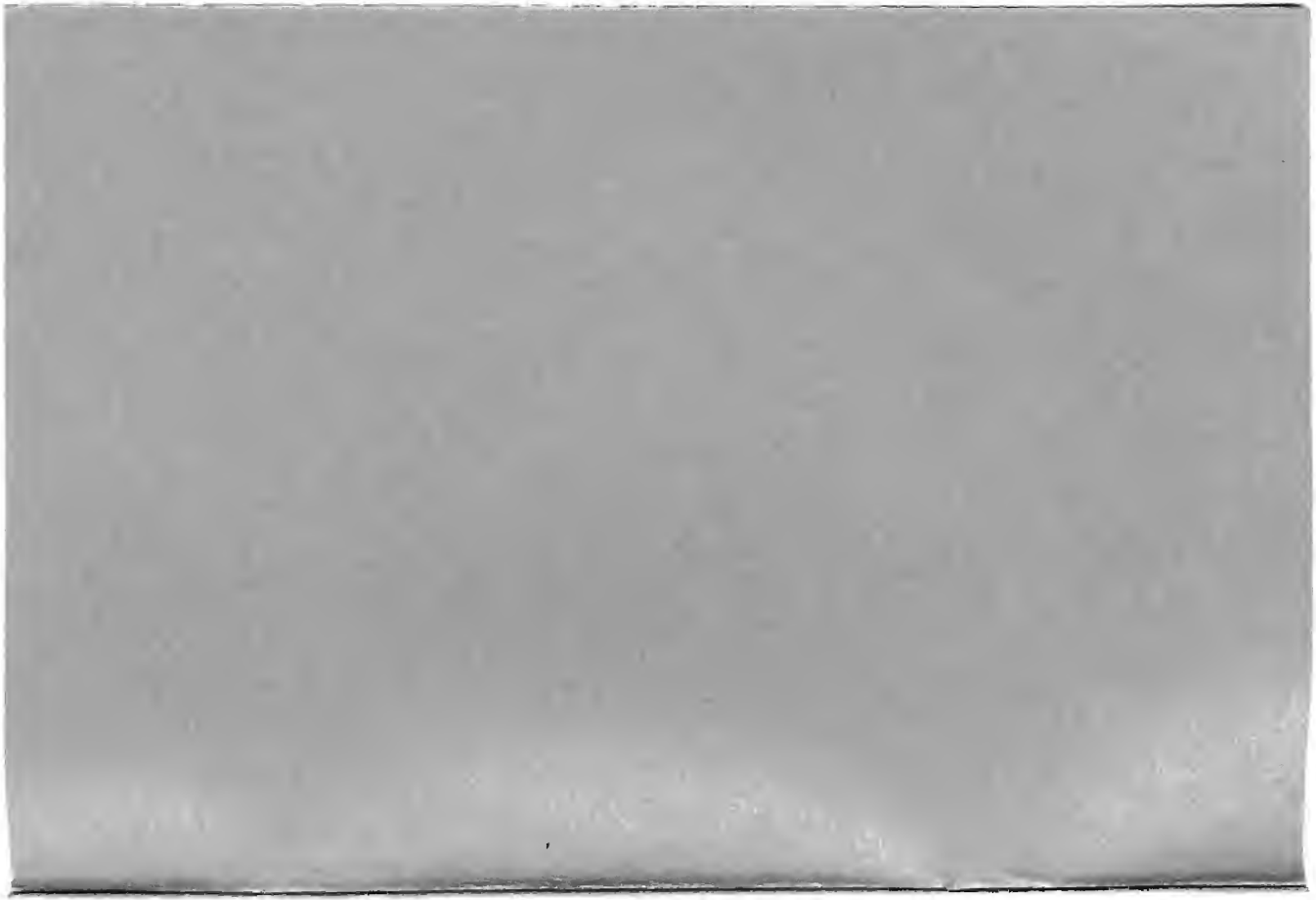

श्री गुरुगीता

श्री कुलार्णव महातन्त्र से उद्धृत

भाषानुवादक

प्रो० मखन लाल कुकिलू

शास्त्री, साहित्याचार्य

ईश्वर आश्रम ट्रस्ट

इशबर, निशात, श्रीनगर (कश्मीर)

प्रकाशक :

ईश्वर आश्रम ट्रस्ट

श्रीनगर • जम्मू • नई दिल्ली

पुस्तक प्राप्ति स्थान :

ईश्वर आश्रम ट्रस्ट

(१) इशबर, निशात, श्रीनगर, काश्मीर

(२) आर-५-पॉकेट डी, सरिता विहार, नई दिल्ली - ७६

(३) महेन्द्र नगर, जम्मू तवी

प्रथम संस्करण : सन् २००९

मूल्य : गुरुभक्ति

मुद्रक :

मेहरचन्द लछमनदास पब्लिकेशन्स

४२२५-ए , १ अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-११० ००२

इस पुस्तक के विषय में

"श्री गुरुगीता" नामक इस पुस्तिका का स्वतंत्ररूप से भाषानुवाद सहित प्रकाशन अपार हर्ष का विषय है। यह "श्री गुरुगीता" दिव्य मन्त्र स्तुति है जो "कुलार्णवतन्त्र" नामक रहस्य तंत्र से उद्धृत की गई है। कश्मीर का सांस्कृतिक, धार्मिक तथा सामाजिक लेखा-जोखा प्रदान करने में दो प्राचीन तन्त्रों—श्री रुद्रयामलतन्त्र तथा श्री कुलार्णवतंत्र—का बड़ा हाथ रहा है। यद्यपि देवीरहस्यतंत्र तथा गन्धर्वतंत्र का प्रभाव भी नकारा नहीं जा सकता फिर भी श्री कुलार्णवतंत्र ने कश्मीर के सामाजिक क्षेत्र को बहुत प्रभावित किया। यह "श्री गुरुगीता" शिव-शिवा के संवाद पर आधारित है। मां शिवा "श्रीगुरु-पादुका-स्तुति" की महत्ता के विषय में श्री महादेव से पूछती है और भगवान् शंकर उसका समाधान करते हैं। श्री गुरुपादुका की व्याख्या करते हुए भगवान् शिव कहते हैं कि—

पालनात् दुरितच्छेदात् कामितार्थस्य वर्धनात्।
पादुकेति समाख्याता ममतत्त्वं तव प्रिये!।।

अर्थात् "पादुका" में पा+दु+का ये तीन वर्ण हैं। उस में 'पा' से तात्पर्य है कि यह भक्तों की पालना करती है, 'दु' से सारे पापों या मलिन वासनाओं का उन्मूलन अभिप्रेत है और 'का' इच्छित प्रयोजनों के संवर्धन का सूचक है। इस प्रकार श्री गुरुपादुका पापों का संहार करती है, समय-समय पर हमारी रक्षा करती है और अभीष्ट अर्थों या प्रयोजनों की वृद्धि करती है। इस के अतिरिक्त हे प्रिये पार्वती! यह 'पादुका' तव मम तत्त्वं' मेरा और तुम्हारा तात्त्विक स्वरूप है। इस आशय से यह श्री गुरुगीता वैश्विक गुरु-सम्प्रदाय की धरोहर है। धरोहर समझकर हम इसका संरक्षण करें और श्रद्धा के साथ इसमें प्रतिपादित मूल सत्यों का पालन करें।

"**सब सन्त एक मत**" इस कथन के आधार पर सभी आश्रमों के इष्ट गुरुओं के मूल में एक ही पराभावना व्याप्त है जिसकी एक समान सर्वव्यापी

देशना है। अतः जिस किसी आश्रम में जहां कहीं इस श्री गुरुगीता का मनन व निदिध्यासन होगा वहां उस आश्रम के इष्ट गुरुदेव की उपस्थिति अवश्यंभावी होगी और उसी को आराध्यदेव मानकर वहां इस श्री गुरुगीता का प्रवचन, मनन व क्रियान्वयन होगा। इसी मर्म को ध्यान में रखकर आशा है प्रस्तुत पुस्तिका प्रत्येक गुरु-आश्रम में श्रीगुरुपूजा के अवसर पर आध्यात्मिक उन्नति और मानसिक शान्ति का स्रोत बनेगी। मेरी सभी साधकों से सविनय प्रार्थना है कि इस पुस्तिका को किसी विशेष आश्रम के साथ न जोड़कर इसे अपने अपने आश्रम की सम्पत्ति मानकर सम्मान करें।

श्रीगुरु महिमा

जन्म जन्मान्तरों की कालिख को मिटाने में सद्गुरु महाराज के श्री चरणों का एक प्रकाश जितना सामर्थ्यशाली है उतना प्रचण्ड भास्कर का प्रचण्ड प्रकाश नहीं। कहा है कि–

अस्त्यस्मिन् महसां महानिधिरसौ देवो विवस्वान् महान्
यस्मिन् जाग्रति जाग्रतीव रजनीसुप्ताः इमे जन्मिनः।
किन्त्वेका महती ततो विजयते श्री दैशिकांघ्रि द्युतिः,
यत् भासा च्छुरितं चिरन्तन तमो हित्वैव जागर्ति सत्।।

अर्थात् – प्रकाश महानिधि उग्र तेजधर
भास्कर जग में हैं महान्।।
जिसके उदय से जगता सब जग
भ्रान्त निशान्ध भी एक समान।।
उस प्रकाश से बढ़चढ़ गुरु के–
श्री चरणों की ज्योति की शान।।
जिससे सारा तत्क्षण मिटता
जन्मान्तर अर्जित अज्ञान।।

यह सद्गुरु महाराज का अद्भुत माहात्म्य है कि सद्गुरुदेव का दिव्यस्वरूप ही माया के अन्धकार में भटकने वाले पथिकों को अपनी अपूर्व ज्ञान ज्योति से मार्गप्रदर्शन करता है। जिस प्रकार पानी में नमक के

मिल जाने से नमक का स्वरूप मिट जाता है और वह पानी के साथ एकाकार होता है, उसी प्रकार सद्गुरु का दिव्यप्रकाश मितप्रकाश में लीन होकर अनिर्वचनीय बन जाता है। सद्गुरु महाराज शिवस्वरूप है "**शिवो भूत्वा शिवं यजेत्**" तन्त्रों की इस उक्ति के आधार पर हम भी स्वयं शिवस्वरूप होके शिवरूप गुरु के लोक कल्याण के भागीदार बनें। जैसे भुना हुआ बीज अंकुर-उत्पादन की क्षमता से हीन होता है, वैसे ही सद्गुरु महाराज का दर्शन मात्र सांसारिक अशुभ वासनाओं की फलप्रदाशक्ति को क्षीण बनाता है, जैसे "**सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति**" वैसे ही श्रद्धाभक्ति, अनुराग तथा समस्त वन्दनादि सद्गुरु महाराज के श्री चरणों में समर्पित होते है। सद्गुरु देव का माहात्म्य अपरम्पार है। इनसे जिन्होंने जो चाहा उन्हें वह प्राप्त हुआ। सद्गुरुदेव वह कल्पतरु हैं, जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चारों प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं। सद्गुरु महाराज का श्रीविग्रह दिव्यतत्वों से समुज्ज्वल है। भागीरथी की धारा की तरह सतत् रूप से प्रवहमान गुरुदेव का नामजप अनुत्तर लोकलीला का क्षेत्र है। श्री गुरु का व्यक्तित्व सविकल्प समाधि तथा निर्विकल्प समाधि का मिश्रण है। यह सद्गुरु का ही अकाट्य माहात्म्य है कि शिवरूप श्रीगुरु से दीक्षित शिष्य दीक्षा काल में जिस तत्त्व में योजित होता है, वह उसी तत्त्व में परिनिष्ठित होता है। श्रीमालिनीविजयोत्तरतंत्र में कहा है कि–

यो यत्र योजितस्तत्त्वे स तस्मात् न निवार्यते।

श्री तन्त्रालोक में भी आचार्य अभिनवगुप्तपाद ने कहा है कि–

शिवोऽयं शिव एवास्मीत्येवमाचार्य शिष्ययोः।
हेतु तत्वत्ततया दाढर्याभिमानो मोचको ह्यणोः।।

अर्थात्–मेरा आराध्यगुरु ही शिव है, मैं भी स्वयं शिव हूँ। इस तरह गुरु और शिष्य मे हेतु हेतमत् भाव के आधार पर अभिमान की दृढ़ता जीव या पशु को पशुता के पाश से छुटकारा दिलाने में सक्षम होती है।।

सद्गुरु महाराज का यह माहात्म्य है कि उनके उपदेशामृत के वाक्य

ममत्व की दावा से झुलसी हुई मरुस्थली को प्रावृट् की वर्षा की तरह आसिंचन कर शान्त करते हैं, उनके कृपा कटाक्षों की चन्द्रिका पूर्वजन्म संचित वासना संस्कारों की ऊसर भूमि में शीतलता की छाया बिखेरती है। उनकी स्मृति नन्दनवन की कल्पलता की तरह प्रत्येक सिद्धि प्रदान करती है। सद्गुरुदेव अपने माहात्म्य से जीव के अहंग्रह को शान्त करते हैं। आवागमन के झंझट में उलझे जीव को भय से मुक्त करते हैं। जीव की उलझी हुई बुद्धि तथा भ्रान्तमन को उलझन से दूर करके योग के सामर्थ्य से स्वच्छ बनाते हैं। सद्गुरुदेव का वरदहस्त जब दीक्षित शिष्य के मस्तक को अलंकृत करता है तभी आत्मानुभूति की ज्योति जागृत होती है। पांच-भौतिक शरीर में कुछ दिन रहते हुए भी वह जीवन्मुक्त अवस्था में देहाभिमान शून्य होकर विचरण करता है। शैवी सद्गुरु की अनुकम्पा अमृत तत्त्वमय है। इस गुरुगीता का माहात्म्य इतना है कि क्षणमात्र में ही जीवन में अमरत्व का आभास होता है।

विभिन्न गुरु मण्डलों के समस्त साधकगण ईश्वर आश्रम ट्रस्ट के आभारी हैं कि श्रीगुरुगीता नामक इस महनीय पुस्तिका का सानुवाद प्रकाशन करके उसने साधना के पथ को ज्योतिर्मय बनाया।

उन महानुभावों को धन्यवाद देना मेरा परम कर्त्तव्य है जिन्होंने इस पुस्तिका के प्रकाशन के लिए आर्थिक सहायता देकर बहुत सारे भक्तों की चिरकालिक इच्छा पूर्ण की। सद्गुरु पादुका उन सभी भक्तों व साधक दानियों का आध्यात्मिक उद्धार करें।

जयगुरु देव

प्रो० मखनलाल कुकिलू

ॐ

अथ श्री गुरुगीता

नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्।
शिरसा योगपीठस्थं धर्मकामार्थसिद्धये।। १।।

मैं आध्यात्मिक उन्नति, सांसारिक सुखभोग और सम्पन्नता की सिद्धि के लिए, योगस्थिति में विराजमान, साक्षात् शिवरूप, शान्त स्वभाव वाले और प्रत्यक्ष दिखने वाले, सद्गुरु महाराज को सिर झुकाकर नमन करता हूँ।।१।।

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दाम्यानन्दविग्रहम्।
यस्य सन्निधिमात्रेण चिदानन्दायते परम्।। २।।

मैं आनन्दस्वरूप तथा अत्यन्त हर्षोल्लास प्रदान करने वाले, उस सद्गुरु महाराज की वन्दना करता हूँ, जिसके मात्र समीपस्थ रहने से ही मेरा मन अतीव प्रफुल्लित हो रहा है।। २।।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशिलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।। ३।।

जिस सद्गुरु ने, अविद्यारूपी तिमिर रोग से ग्रस्त बने हुए मेरे नेत्रों को, ब्रह्मज्ञानरूपी अञ्जन (काजल) की शलाका से (शलाका उस मोटी तीली को कहते हैं, जिससे आंखों में काजल लगाया जाता है) ज्योतिर्मय बनाया, उस सद्गुरु महाराज को मेरा भावात्मक प्रणाम हो।। ३।।

विशेष : तिमिर – आँखों का वह रोग है जिससे एक वस्तु दुहरी दिखाई देती है। अपने स्वरूप को न जानना भी तिमिर नामक रोग है जो द्वैतप्रथा

को जन्म देता है।।

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।४।।

जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भूत है, जो इस स्थावर जंगमरूप संसार में व्याप्त है, और जिसने उस परतत्त्व पद को भली-भांति समझाया है, उस सद्गुरु महाराज को मेरा भावात्मक प्रणाम हो।। ४।।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुः साक्षात् महेश्वरः।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्रीगुरवे नमः।।५।।

सद्गुरु ही ब्रह्मास्वरूप (सृष्टि कर्ता) है, सद्गुरु ही नारायण स्वरूप (पालन कर्ता) है, सद्गुरु ही साक्षात् शिवस्वरूप (संहर्ता) है। सद्गुरु ही यह दृश्यमान सारा विश्व है। ऐसे विश्वात्मक त्रिदेव को मेरा भावात्मक प्रणाम हो।। ५।।

नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरुरूपिणे।
विद्यावतार संसिद्धचै स्वीकृतानेक विग्रह।। ६।।

हे जगत् स्वामी! हे महादेव! सद्गुरु के रूप में आपने, पराविद्या के आविर्भाव और परिपूर्णता के लिए, अनेक रूप धारण किये। आपको मेरा नमन स्वीकार हो।। ६।।

नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे।
सर्वाज्ञानतमोभेद भानवे चित्घनाय ते।।७।।
स्वतंत्राय दयाक्लृप्तविग्रहाय परात्मने।
परतंत्राय भक्तानां भव्यानां भव्यरूपिणे।। ८।।
ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम्।

विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम्।।९।।(तिलकम्)

हे सद्गुरु! आपके नव अभिनव सर्वोत्कृष्ट स्वरूप को मेरा प्रणाम हो। सारे अज्ञानरूपी अन्धकार को हटाने के लिये सूर्यरूप आप चिदानन्दघन को मेरा नमन हो। हे सद्गुरु ! आप स्वतन्त्र हो। दया के मूर्तिमान स्वरूप हो। आप सर्वश्रेष्ठ हो, आप अपने भक्तों के वश में हो। आप सुख और कल्याण की अभिलाषा रखने वालों के लिए मंगलस्वरूप हो। आप ज्ञानियों के लिए ज्ञानरूप हो, प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक शिष्यों के लिए प्रकाश स्वरूप हो, अहं परामर्श के विमर्श में तत्पर रहने वालों के लिए सोऽहं स्वरूप हो, और विचारशील साधकों के लिए सत् विवेक हो।।७-९।।

पुरस्तात्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यधः।
सदा सच्चित्तरूपेण करोमि तव शासनम्।।१०।।

हे सद्गुरु ! मैं आप को सामने से और दोनों ओर से प्रणाम करता हूँ। मैं आप को पीछे से और ऊपर नीचे से प्रणाम करता हूँ। मैं सदा आप के सत् चित् रूप के वशीभूत होकर आपकी आज्ञा का पालन करता रहूँगा।।१०।।

अब अगले तीन श्लोकों में "गुरुमण्डल" के तीन रूपों के अन्तर्गत प्रत्येक मण्डल में विराजमान गुरुओं का नामांकन किया गया है। ये तीन गुरुमण्डल इस प्रकार हैं – दिव्यौघ, सिद्धौघ और मानवौघ। दिव्यौघ में दिव्यलोक स्थित प्रमुख गुरुओं का, सिद्धौघ में प्रधान सिद्ध गुरुओं का और मानवौघ में इहलोक स्थित प्रमुख गुरुओं का उल्लेख है। सद्गुरु महिमा स्तोत्र में तथा सद्गुरु पूजाविधि में इन तीनों गुरुभूमिकाओं का निर्देश अत्यावश्यक होता है। उसी परिपाटी का अनुसरण करते हुए ये निम्नांकित तीन श्लोक हैं :–

प्रकाशानन्दनाथं च विमर्शानन्दनाथकम्।
आनन्दानन्दनाथं च दिव्यौघं गुरुमण्डलम्।।११।।
श्री सत्यानन्दनाथाह्वं श्रीज्ञानानन्दनाथकम्।
श्रीपूर्णानन्दनाथं च सिद्धौघान्पूजयाम्यहम्।।१२।।
प्रतिभानन्दनाथाख्यं स्वभावानन्दनाथकम्।
श्रीसुधानन्दनाथाह्वं मानवौघान्गुरुन्भजे।।१३।। (तिलकम्)

"दिव्यौघ" नाम से प्रसिद्ध प्रथम गुरुमण्डल के तीन अधिष्ठाता ये हैं :–

प्रकाशानन्दनाथ, विमर्शानन्दनाथ, आनन्दानन्दनाथ।।

"सिद्धौघ" नाम से प्रसिद्ध द्वितीय गुरुमण्डल के तीन अधिकारी सिद्ध इस प्रकार हैं :–

श्री सत्यानन्दनाथ, श्री ज्ञानानन्दनाथ, श्री पूर्णानन्दनाथ।।

"मानवौघ" नाम से प्रख्यात तृतीय गुरुमण्डल के अधोलिखित तीन शासक हैं :–

प्रतिभानन्द नाथ, स्वभावानन्दनाथ, श्री सुधानन्दनाथ।।

गुरु पूजा के अवसर पर मैं इन तीनों मण्डलों के गुरुओं का ध्यान, भजन और पूजन करता हूँ।।११-१३।।

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
शास्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं: मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।१४।।

ध्यान के समय श्री गुरु की मूर्ति का ही ध्यान करना चाहिए क्योंकि वही ध्यान का मूल अर्थात् आधार है। पूजा-अर्चना के समय सद्गुरु के चरण-कमलों की ही पूजा करनी चाहिए,

क्योंकि सद्गुरु के चरणकमल ही पूजा के मूल अर्थात् आधार हैं। सद्गुरु का सत्कथन ही शास्त्रों का मूल अर्थात् आधार है। सद्गुरु की कृपादृष्टि ही मुक्ति का आधार है।।१४।।

येन प्रकाशितं ज्योतिः शिष्यमोहतमोपहम्।
कारुण्यामृतपूर्णाय तस्मै श्रीगुरवे नमः।।१५।।

जिस सद्गुरु ने अपने शिष्य के मोहरूपी अन्धकार को हटाने में समर्थ सद्ज्ञान की ज्योति प्रकाशित की उस दयाभावरूपी अमृत से परिपूर्ण सद्गुरु को मेरा प्रणाम हो।।१५।।

आब्रह्मस्तम्भपर्यन्तं यस्य मे गुरुसंततिः।
तस्य मे सर्वशिष्यस्य को न पूज्यो महीतले।।१६।।

यह एक शिष्य की उक्ति है। वह कहता है कि (वास्तव में) सर्वोच्च ब्रह्मलोक से लेकर जड पदार्थ वर्ग पर्यन्त मेरी सद्गुरु परम्परा है, अतः उस गुरु क्रम का शिष्यरूप बने हुए मेरे लिए इस धरती पर कौन पूजा का पात्र नहीं है।।१६।।

गुरुः शिवः समाख्यातो गुरुः परमकारणम्।
गुरौ तुष्टे जगत्तुष्टं सदेवासुरमानुषम्।।१७।।

सद्गुरु को साक्षात् शिवरूप ही माना गया है। सद्गुरु ही सर्वश्रेष्ठ कारण है। सद्गुरु के सन्तुष्ट होने पर देव, राक्षस और मनुष्यों से खचाखच भरा हुआ यह संसार भी सन्तुष्ट है। अर्थात् जो साधक गुरु कृपावगाही हो, संसार में स्थित सारे देव-राक्षस और नानाप्रकार के मानव उसका कुछ बिगाड़ने में समर्थ नहीं होते हैं।।

गुरुरेव परो मंत्रो गुरुरेव परो जपः।

गुरुरेव परा विद्या नास्ति किंचित् गुरुं विना।।१८।।

सबसे उत्कृष्ट मंत्र यदि कोई है तो वह सद्गुरु नाम ही है, सबसे श्रेष्ठ जप (अर्थात् हरिनाम स्मरण) यदि कुछ है तो वह सद्गुरु नाम माला स्मरण ही है, परतत्त्व का साक्षात्कार कराने वाली यदि कोई तत्त्वविद्या है तो वह सद्गुरु की उपस्थिति ही है। वास्तव में देखा जाये तो सद्गुरु के बिना इस संसार में कुछ भी नहीं है।।१८।।

श्रीगुरुं द्विभुजं शान्तं वराभयकराम्बुजम्।
पूर्णेन्दुवदनाम्बोजं हसन्तं शक्तिसंयुतम्।।१९।।

श्वेतवस्त्रपरीधानं नानालङ्कारभूषणम्।
आनन्दमुदिते देवं ध्यायेत् पंकज विष्टरे।।२०।। (युगलम्)

अपने हस्तकमलों से वर और अभय की मुद्रा धारण करने वाले, शान्त स्वभाव से पूर्ण, दो भुजाधारी, पूनम के चांद के समान मुख कमल से सुशोभित, हास्य मुद्रा से सुसम्पन्न, संवित् शक्ति से अलंकृत, (सात्त्विक भाव को सूचित करने वाले) सफेद वस्त्रों को धारण करने वाले, अनेक प्रकार के दिव्य आभूषणों से मण्डित, द्योतनात्मक स्वरूप वाले, सद्गुरु महाराज का आनन्दातिरेक से प्रफुल्लित हृदय कमल रूपी आसन पर ध्यान करे।।१९-२०।।

यो गुरुः स शिवः प्रोक्तो यः शिवः स गुरुः स्मृतः।
उभयोरन्तरं नास्ति, गुरोरपि शिवस्य च।।२१।।

जिसे आप श्रीगुरु की भावना से भावित करते हैं, वही वास्तव में शिव है और जिसे आप शिव मानते हैं वही वास्तव में श्रीगुरु है। पैनी दृष्टि से यदि देखा जाये तो श्रीगुरु और शिव इन दोनों में कोई

अन्तर नहीं है, श्रीगुरु ही शिव है और शिव ही श्रीगुरु है।।२१।।

गुरुः शिवगतो ज्ञेयः शिवो गुरुमुखोद्गतः।
यो गुरुः स शिवः साक्षात्पूजनीयः प्रयत्नतः।।२२।।

ऐसी धारणा है कि श्रीगुरु का शिव में ही अन्तर्भाव है और शिव भी श्रीगुरु की शक्ति का ही परिणाम है। अतः जैसे तैस साक्षात् शिव मानकर ही श्रीगुरु की पूजा करनी चाहिए।।२२।।

गोभिर्यस्य निरन्तराभिरभितो
द्वैतान्धकारक्षयात्।
सर्वाशाप्रविकासनेन पुरुषाः
सुप्ताः प्रबुद्धाः कृताः।।
पादा तस्य जयन्ति सद्गुरुमहा-
हंसस्य यत्प्रक्रमैः।
भिन्ना मन्मतिषट् पदी रसयति
श्री शैव शास्त्राब्जिनीम्।।२३।।

जैसे लगातार बहने वाली सूरज की किरणों से चारों ओर अन्धेरा मिट जाता है, सारी दिशायें प्रकाश से खिल उठती हैं, और रात की गहरी नींद में पड़ा हुआ समस्त प्राणिवर्ग जाग उठता है उसी प्रकार श्रीगुरु महाराज के सदुपदेश रूपी किरणों से द्वैतरूपी अर्थात् अविद्यारूपी अन्धकार के नष्ट होने पर चिन्तन शैली और संकल्प विकल्पों में बदलाव आने के परिणामस्वरूप मोहनिद्रा में डूबे हुए साधक जाग उठते हैं। ऐसे महाहंसरूपी श्रीगुरु के चरणों के जय-जयकार हो जिनकी परिक्रमा करने से मेरी बुद्धि रूपी भंवरी विवश होकर श्री शैवशास्त्र रूपी कमलिनी के पराग का

रसास्वादन करती रहती है।।२३।।

विशेष– महाहंस यहां श्रीगुरु का पर्याय है। जैसे हंस दूध और पानी को अलग अलग करता है वैसे ही सद्गुरु भी अपने शिष्यों की नकारात्मक प्रवृत्तियों को धकेलकर सकारात्मक ऊर्जा को उजागर कर दूध सा निर्मल बनाता है।

कर्त्तव्या करणानि तद्गुरु पदा-
म्बोजस्तवे चातुरी।
जिह्वीभूयविवर्जितात्म गुणसं-
योगैर्भवद्भिः ध्रुवम्।
तर्कव्याकरणागमैः सहमहा
पुण्योपलभ्यैर्यतो
यूयं यन्प्रतिपादितैः सफलतां
सेवध्वमस्मिन्भवे।।२४।।

आपको स्वात्म गुणों के संयोग से यदि कुछ निष्कपट कर्तव्य कर्म करने की अभिलाषा है तो निश्चय करके श्रीगुरु के चरण कमलों की अस्तुति में कर्तव्य परायणता की दक्षता प्राप्त करो। अत्यधिक पुण्यों से प्राप्त करने योग्य, तर्कशास्त्र, शब्दशास्त्र और आगम ग्रन्थों के, स्वाध्याय के कारण ही जो कर्तव्य परयणता की चातुरी आप ने प्राप्त कर ली है उसी के परिणाम स्वरूप आप इस संसार में हर प्रकार की सफलता का अनुभव प्राप्त करोगे।।२४।।

ब्रह्मानन्दं परममुखदं, केवलं ज्ञानमूर्त्तिम्,
द्वन्द्वातीतं, गगनसदृशं, तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।
एकं नित्यं, विमलमचलं, सर्वदा साक्षिभूतं

भावातीतं, त्रिगुणरहितं, सद्गुरुं तं नमामि।।२५।।

जो श्रीगुरु ब्रह्मानन्द स्वरूप हैं अर्थात् "अहं ब्रह्मास्मि" की अनुभूति में रंगे हुए हैं, जो अननुभूत परम शान्ति दायक हैं, जो एकमात्र ज्ञान की मूर्ति हैं, जो धर्माधर्म, सुखदुःख, हर्षामर्ष पुण्यपाप आदि द्वन्दों से परे हैं, जो आकाश के समान निर्मल है जिसका "तत् त्वं असि" अथवा सोऽहमस्मि ही प्रधान ध्येय है, जो अद्वितीय है, शाश्वत है, निर्मल है, अचल है, प्रत्येक कर्म का साक्षी है, भावसाधना से अतीत है, सत्त्व रजस्तमात्मिक त्रिगुण वृत्ति से रहित है, उस सद्गुरु को मेरा नमन हो।।२५।।

तावत् आर्तिभयं तावत् तावत् शोक भ्रमादयः।
यावन्नायाति शरणं, श्रीगुरोः पादुकास्मृतिम्।।२६।।

इस संसार में तब तक पीड़ाओं का, नाना प्रकार के दुःखों का, और अनेक भ्रान्तियों का भय है जब तक साधक श्रीगुरु की चरण पादुका की स्मृति के शरण में नहीं आता है।।२६।।

श्री देव्युवाच–

श्री देवी कहने लगी–

प्रायश्चित्त विहीनस्य फलं भोगाय केवलम्।
सर्वसाक्षी महादेवो नरकानसृजन्पुनः।।२७।।

प्रत्येक दुष्कर्म के अमंगल प्रभाव को कम करने के लिए शास्त्रों में प्रायश्चित करने का विधान है क्योंकि प्रायश्चित करने के बिना कर्म का फल भुगतना ही पड़ता है। इसी भाव को ध्यान में रखकर सर्वकर्मसाक्षी महादेव को नाना प्रकार के नरकों के सृजन करने का विचार आया।।२७।।

तस्मात्सर्व प्रयत्नेन प्रायश्चित्तमिहैवतु।
कृतस्य कर्मणः कुर्यादवलेपो भवेद्यदि।।२८।।

अतः यदि विहित कर्म में जब कभी असावधानता बरतोगे, तो जैसे तैसे इसी जन्म में उस किये गये कर्म के दोष से मुक्त होने के लिए प्रायश्चित करे।।२८।।

प्रामादिक महादोष, प्रविलापनकारणम्।
प्रायश्चित्तं परं सत्यं श्रीगुरोः पादुकास्मृतिः।।२९।।

असावधानता में किये गये निषिद्ध कर्मों से उत्पन्न महान् दोषों से मुक्त होने के लिए सचमुच श्रेष्ठ प्रायश्चित तो श्रीगुरुदेव की चरणपादुका की मधुर स्मृति है।।२९।।

त्वयैवोक्तं महेशान, कथं स्मर्तव्यमीश्वर।
वद मे कृपया, देव, श्रीगुरोः पादुकास्मृतिः।।३०।।

देवी उमा श्री शिव से कहती है कि हे ईश्वर ! हे महादेव ! आप ही ने पहले सद्गुरु पादुका स्मृति के विषय में बहुत कुछ कहा है। उसका स्मरण कैसे करना चाहिये। हे देवाधिदेव। कृपा करके मुझे श्रीगुरु की पादुकास्मृति के विषय में कहिये।।३०।।

श्री भैरव उवाच–

श्री भैरव कहने लगे–

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, श्रीगुरोः पादुकास्मृतिम्।
प्रायश्चित्त विहीनानां, सर्वपापहरं कलौ।।३१।।

हे देवि ! कलियुग में पाप शान्ति के लिए प्रायश्चित न करने वालों के लिए, सारे पापों का हरण करने वाली श्रीगुरु की पादुका स्मृति

के विषय में मैं तुझे कहूँगा। सावधान होके सुनो।।३१।।

यस्य श्रीपादरजसा, रञ्जयन्मस्तकं शिवः।
रमते सह पार्वत्या तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।३२।।

यह उसी सद्गुरु की चरण पादुका स्मृति का प्रताप है जिसकी चरण धूलि से भगवान् महादेव भी अपने मस्तक को रंजित करता हुआ अपनी प्रिया पार्वती के साथ रमन करता है।।३२।।

यो मोहतमसाक्रान्तमुद्धरत्यन्धकूपतः।
केवलं कृपया नाथः तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।३३।।

जो सद्गुरु मोहरूपी अन्धकार से आक्रान्त बने हुए साधक को गहरे संसाररूपी अन्धकूप से मात्र कृपादृष्टि से ही बाहर निकालता है। यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है ।।३३।।

विशेष – अन्धकूप–वह कुआं जिसका विस्तार ऊपर से नीचे तक क्रमशः कम होता जाता है तथा चारों ओर प्रकाश न आने से अन्धकार ही अन्धकार दीख पड़ता है अतः नीचे धकेले जाने की प्रक्रिया पर भी विशेष प्रभाव पड़ता है।

यस्य त्रैलोक्यमखिलं, सच्चिदानन्दलक्षणम्।
पूर्यते स्वगुणैः शक्त्या, तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।३४।।

जिसकी शक्ति से सत् चित् आनन्द रूप सारा संसार अपने गुणों से लबालब भरा रहता है यह उसी श्रीगुरु की पादुका- स्मृति है।।३४।।

यस्य त्रैलोक्यमखिलं वशे तिष्ठत्यशेषतः।
सदृष्टिपातमात्रेण तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।३५।।

जिसकी सद्दृष्टि से ही सारा संसार संपूर्ण रूप से वश में रहता है यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है ।।३५।।

यस्मै सर्वस्वमात्मानमेकीकृत्यापि भक्तितः।
समर्पयति सच्छिष्यस्तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।। ३६।।

सत् शिष्य, जिस श्रीगुरु को अपना सारा एकत्रित किया हुआ बहुमूल्य पदार्थ वर्ग भक्ति के साथ न्योछावर करता है, यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।। ३६।।

यमाश्रित्यात्मविज्ञानं संविदे मृगयामहे।
हेतुकैर्मोषितं दोषैस्तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।। ३७।।

नाना प्रकार के सांसारिक कारणों और दोषों से अस्पष्ट बना हुआ 'आत्मविज्ञान' जिस श्रीगुरु की शरण में जाकर हम उसे अपनी संवित में टटोलते रहते हैं, यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।। ३७।।

यस्मिन्सृष्टि स्थितिध्वंस, पिधानानुग्रहात्मकम्।
प्रकाश्यते पञ्चकृत्यं तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।। ३८।।

सृष्टि, स्थिति, संहार पिधान और अनुग्रह नामक पांच कर्म जिस श्रीगुरु में सदा दृष्टिगोचर होते हैं यह उसी श्रीगुरु की पादुका-स्मृति है।।३८।।

मूले हृदि ललाटे च द्वादशांते परः शिवः।
यस्याज्ञां पालयन्नास्ते तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।। ३९।।

मूलाधारचक्र में, अनाहतचक्र में, आज्ञाचक्र में, और सहस्रार में परमशिव भी जिस श्रीगुरु की आज्ञा का पालन करता हुआ दीख

पड़ता है, यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।। ३९।।

यस्य पादतले सिन्धुः पादाग्रे कुलपर्वताः।
गुल्फे नक्षत्रवृन्दानि, तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।। ४०।।

जिस श्रीगुरु के तलवों में सागर, अंगुलियों में श्रेष्ठ पर्वत, टखनों में तारा मण्डल निवास करता है यह उसी श्रीगुरु की पादुका- स्मृति है।।४०।।

वनस्पतिस्तथा रोम्नि शतरुद्राश्च जङ्घयोः।
जान्वोः त्रिदशसंदोहास्तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४१।।

जिस श्रीगुरु के रोम रोम में श्रेष्ठ औषधियां और टांगों में रुद्रशतक, तथा घुटनों में देवताओं का समुदाय है यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।।४१।।

आधारे परमाशक्तिः नाभिचक्रे हृदाज्ञयोः।
योगिनानां चतुंःषष्टिस्तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४२।।

जिस श्रीगुरु के मूलाधार में कुण्डलिनी शक्ति, मणिपूरचक्र में, अनाहत चक्र में और आज्ञाचक्र में चौंसठ योगिनियां है यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।।४२।।

हृदये मातरः कण्ठे शिरः पीठोपपीठयोः।
चिबुके यस्य देवाश्च तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४३।।

जिस श्रीगुरु के अनाहत चक्र में ही ब्राह्मी, माहेश्वरी, ऐन्द्री, कौमारी आदि आठ मातृका शक्तियां हैं, कण्ठे–विशुद्धि चक्र में, शिरः–ब्रह्मरन्ध्र में, पीठ–अर्थात् अनाहत चक्र के पिछले भाग (back side) में, उपपीठ अर्थात् मणिपूर चक्र के पिछले भाग

(back side) में, चिबुके विशुद्धिचक्र के साथ सम्बद्ध ठुड्डी, जबड़े आदि में सारे देवताओं का वास है, यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।।४३।।

यज्ञः कपोलयुग्मे च जिह्वाग्रे च सरस्वती।
यस्य दन्तेषु मंत्राश्च तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४४।।

जिस श्रीगुरु के गालों में यज्ञ है (यज्ञ शब्द यज धातु से बना है जिसका अर्थ है- देव पूजा-संगतिकरण व दानेषु अर्थात् यज्ञ का तात्पर्य देव पूजा आहुतियों आदि से संगतिकरण-याजक और इष्ट देव का संगति करण-मिलान, और दान अपने अन्तःकरण त्रय अर्थात् मन, बुद्धि और अहंकार को आहुति के रूप में डालना। श्री गीताजी में भी कहा है—'ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविः' इत्यादि जीभ के अग्रभाग—नोक पर सरस्वती है, और जिसके दान्तों में साढ़े तीन करोड़ मन्त्र हैं यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।।४४।।

स्कन्दे च खेचरा देवास्त्रिनेत्रे तेजसञ्चयः।
लिपित्रयं ललाटे च तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४५।।

जिस श्रीगुरु के कन्धों में आकाशगामी देव हैं, तीनों नेत्रों में एकत्रित प्रकाशपुञ्ज है, माथे पर तीन सर्व सौभाग्य सूचक रेखायें हैं, यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।।४५।।

इडापिंगलयोरत्र गंगा च यमुना तथा।
मध्ये सरस्वती यस्य तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४६।।

जिस श्रीगुरु की इडा नाड़ी और पिंगला नाड़ी में अर्थात् प्राण और अपान में गंगा और यमुना है, तथा मध्यनाड़ी में अथवा सुषुम्ना में सरस्वती नदी का वास है (इस प्रकार श्रीगुरु गंगा, यमुना और

सरस्वती का संगम प्रयागराज है) यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।। ४६।।

आद्यन्ते दृढभेदस्य पशुपाशविमोचनम्।
यामाहुः शाम्भवी वाचस्तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४७।।

अज्ञान के कारण जब शिव ही जीव भाव (पशु भाव) को प्राप्त करता है (कहा है कि–शिव एव गृहीत पशुभावः) तो अनेक प्रकार के बन्धनों से घिरे रहने के कारण उस पशुरूप पाश (फन्दा) को काटने में वह असमर्थ होता है क्योंकि उस पाश की आदि और अन्तवाली गांठ इतनी उलझी हुई होती है कि उसको खोलना दुष्कर होता है पर जिस सद्गुरु महाराज की शांभवी दीक्षा (अर्थात् महामृत्युंजय की संजीवनी शक्ति) उस पशु पाश को छिन्न-भिन्न करने में एक मात्र सहायक होती है यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।। ४७।।

ऊर्वोश्च सिद्धवीरेन्द्राः लिंगमूले च भैरवः।
लिंगाग्रेऽप्सरसो यस्य तस्य श्रीपादुकास्मृतिः।।४८।।

जिस श्रीगुरु के ऊरुओं में सिद्ध योगियों का और वीरेशों का (त्रितयभोक्ता वीरेशः–शिवसूत्र) वास है, लिंग मूल में स्वयं भैरव और लिंग के अगले भाग पर सुन्दर अप्सराओं का वास है, यह उसी श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।। ४८।।

गुरुः शिवो गुरुर्विष्णुर्गुरुर्ब्रह्मा गुरुः पर।
गुरुरग्निर्गुरुर्मन्त्रो भानुरिन्द्रस्तथैव च।।४९।।

सद्गुरु ही शिव है, सद्गुरु ही विष्णु है सद्गुरु ही ब्रह्मा है (अर्थात् सद्गुरु ही त्रिकारण है) सद्गुरु ही सर्वश्रेष्ठ है, सद्गुरु ही

अग्नि है, सद्गुरु ही उपास्य मन्त्र है, सद्गुरु ही सूर्यनारायण है और सद्गुरु ही इन्द्र है।।४९।।

अन्यत्सर्वं सप्रपञ्चं निष्प्रपञ्चं गुरुः स्मृतः।
तस्माच्छ्रीपादुकाध्यानं सर्वपाप निकृन्तनम्।।५०।।

इस संसार में जो कुछ भी है उसमें माया का बखेड़ा किसी न किसी रूप में विद्यमान होता है। पर आश्चर्य की बात है कि एक मात्र सद्गुरु का नाम ही एक ऐसा तत्त्व है जिसमें माया का प्रभाव हावी हो नहीं सकता है। इसीलिए कहा है कि श्रीगुरु की पादुका का ध्यान सारे पापों की राशि को काटने में एकमात्र साधन है। पाप राशि के भस्म होने पर ही साधक माया के वश में नहीं आ सकता है।।५०।।

श्री गुरोः पादुकास्तोत्रं प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
नश्यन्ति सर्वपापानि वह्निना तूलराशिवत्।।५१।।

जो साधक प्रातः उठकर श्रीगुरु के पादुका स्तोत्र का स्वाध्याय करेगा उसके पापों की ढेर इस प्रकार ढ़ह जायेगी जैसे रुई की ढेर आग से जल जाती है। पर अन्य पदार्थों के जल जाने पर उनका आकार स्पष्ट दीख पड़ता है जबकि रुई के जल जाने के साथ-साथ इसका आभास भी मिट जाता है। इसी प्रकार से साधक की पाप राशि भी जब गुरु कृपा से जल जाती है तो उन पापों का संस्कार भी साथ-साथ मिटता है ताकि दूसरे जन्म में उन पापों की वासना पीछा न करे।।५१।।

पठितव्यं प्रयत्नेन श्रोतव्यं भक्तिशालिभिः।
भोगमोक्षार्थिभिस्तस्मात्सद्भिरागम पारगैः।।५२।।

पदच्छेदः—भोग मोक्षार्थिभिः तस्मात् सद्भिः आगम पारगैः।।

अतः भुक्ति और मुक्ति (भोग और मोक्ष) की कामना करने वाले, और आगम शास्त्रों के सार को जानने वाले भक्तिशाली साधकों को पादुका स्तोत्र अत्यावश्यक मानकर सदा पढ़ना चाहिए तथा सजग होकर इसे सुनना चाहिए।।५२।।

गुरुगम्यं भवेत्सर्वं गुरुरेव प्रजापतिः।
गुरौ तुष्टे हरस्तुष्टस्तस्मै श्रीगुरवे नमः।।५३।।

इस संसार में सब कुछ गुरु कृपा से ही प्राप्त किया जा सकता है। गुरु को ही प्रजा का स्वामी कहा गया है (प्रजापति ब्रह्मा को भी कहते हैं) श्रीगुरु के सन्तुष्ट होने पर स्वयं परमात्मा सन्तुष्ट होता है। ऐसे महनीय श्रीगुरु के प्रति मेरा भावात्मक नमन हो।।५३।।

येनाभेदप्रकाशेन भेदध्वान्तं विलापितम्।
नौमि तं सद्गुरुं हंसं हृत्पङ्कजविकासकम्।।५४।।

जिस श्रीगुरु ने अद्वैतभावना रूपी प्रकाश से द्वैतभावना रूपी अन्धकार को मिटा दिया, उस हृदय रूपी कमल को विकसित करने वाले सद्गुरुरूपी सुन्दर राजहंस को मैं प्रणाम करता हूँ।।५४।।

महारोगे महोत्पाते महादुःखे महाभये।
महापदि महापापे स्मृता रक्षति पादुका।।५५।।

असाध्य रोगों से पीड़ित होने पर, महान उपद्रव के आने पर, असहनीय दुःखों के पहाड़ के आ टूट पड़ने पर, महान् भय की उपस्थिति में, महान् आपत्ति में, हिंसा ब्रह्महत्या आदि घोर पापों में श्रीगुरु पादुकास्मृति ही सुरक्षा का एकमात्र साधन है।।५५।।

गुरुरेव परादेवी गुरुरेव परागतिः।
गुरुमुल्लङ्घ्य यः कुर्यात्, किंचित् स निरयंव्रजेत्।।५६।।

श्रीगुरु को ही महती शक्ति माना गया है, श्रीगुरु ही जीवन में सर्वोच्च लक्ष्य प्राप्ति का स्थान है, अतः श्रीगुरु के कथन का उल्लंघन करके जो शिष्य कुछ भी आना-कानी करता है वह नरक को जाता है।।५६।।

श्री मत्परंब्रह्मगुरुं नमामि
श्री मत्परंब्रह्मगुरुं भजामि।
श्री मत्परंब्रह्मगुरुं वदामि।
श्री मत्परंब्रह्मगुरुं श्रयामि।।५७।।

मैं हर समय शोभायमान परंब्रह्मरूपी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ, उसका गुणगान करता हूँ, उसका सेवन करता हूँ और उसी को अपनाता हूँ।।५७।।

गुकारस्त्वन्धकारः स्याद्रुकारस्तन्निरोधकः।
अन्धकारनिरोधेन गुरुरित्यभिधीयते।।५८।।

"गुरु" इस शब्द की व्याख्या और निर्वचन करते हुए कहा गया है कि 'गुरु' शब्द में प्रयुक्त दो वर्णों में पहला वर्ण 'गु' अन्धकार का वाचक है और दूसरा वर्ण 'रु' उस अन्धकार को दूर करने का वाचक है। अतः इस अविद्यारूपी अन्धकार को मिटाने के कारण ही 'गुरु' को गुरु कहते हैं।।५८।।

गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकः।
दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि शिष्यसन्तापहारकः।।५९।।

भगवान् शिव भगवती शिवा से कहते हैं कि हे देवी ! इस संसार में बहुत सारे गुरु ऐसे हैं जिन्हें शिष्यों के धन की ओर ही सदा ध्यान रहता है पर ऐसे गुरु को प्राप्त करना अति दुर्लभ है जो अपने शिष्य के सन्ताप (आध्यात्मिक-मानसिक-भौतिक) को मिटाने में सदा तत्पर रहता है।। ५९।।

वन्दे श्री विमलं प्रसन्नवदनं कारुण्यरुरूपं परं
ध्यानासक्तहृदम्बुजं सुरासरिन्मौलिं त्रिनेत्रं हरम्।
त्रैगुण्यावृतमानसं भगवते भक्तिप्रदं चिन्मयम्
ध्यायेत्फुल्लसरोरुहाक्षि सततं देवं शिवाख्यंगुरुम्।। ६०।।

मैं प्रसन्न मुख वाले, निर्मल शोभावाले अर्थात् सात्त्विक गुण की प्रतिमूर्ति, अत्यन्त दयाशील, अपने ही हृदय कमल पर ध्यान मुद्रा में लीन, मस्तक पर गंगाधारी, इच्छा ज्ञान क्रिया रूप तीन नेत्रों वाले, सारी नकारात्मक वृत्तियों का हरण करने वाले, चैतन्य स्वरूप, ईश्वर की भक्ति प्रदान करने वाले और सत्त्व रज और तमात्मक तीन गुणों से आवृत मनवाले प्रकाशमान, शिव रूप गुरु को प्रणाम करता हूँ। हे विकसित कमल जैसे नेत्रों वाली देवी! उसी शिवरूप गुरु को निरन्तर ध्यावे।। ६०।।

यस्य स्मरणमात्रेण ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम्।
स एव सर्वसंपत्तिस्तस्मै श्रीगुरवे नमः।। ६१।।

जिस श्री गुरु के केवल स्मरण मात्र से ही स्वतः ज्ञान की ज्योति उत्पन्नि होती है, वही श्री गुरु मेरी सारी पूंजी है। उसी श्री गुरु को मेरा प्रणाम।। ६१।।

चैतन्यं सुशिवं शांतं व्योमातीतं निरञ्जनम्।

नादबिन्दुकलातीतं तस्मै श्री गुरवे नमः।।६२।।

मैं उस श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ जो चैतन्य स्वरूप है, सदा कल्याणमय है, संकल्प विकल्पात्मक द्वन्द्वों से रहित होने के कारण शान्त है, शून्यातीत है, माया की अञ्जन-कालिख से परे है, और जो नाद बिन्दु कला अर्थात् शिव शक्ति यामलावस्था से भी अतीत हैं।।६२।।

विशेष : इस श्लोक में सुशिवं के स्थान पर 'शाश्वतं' भी पाठान्तर है जिसका अर्थ है कि जो नित्य है और नित्य केवल वर्तमान है भूत परोक्ष है और भविष्य घटने वाला है। इसीलिए कहा है कि नित्योऽहं शुद्धोऽहं बुद्धोऽहम्, मुक्तोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।

येन स्मृतेन भवपाशनिकृन्तनैका
संवित्समुल्लसति सर्वगता शिवाख्या।
नणामनुत्तरपद प्रविकासहेतुः
तस्मै नमोऽस्तु गुरवे परमेश्वराय।।६३।।

जिस श्रीगुरु की स्मृति से ही संसार के पापों को काटने में एकमात्र समर्थ सर्वव्यापी शिवमयी संवित् उल्लसित होती है और जो स्मृति साधकों को परमशिव पद की ओर अग्रसर होने के लिए मूल कारण है, उस परमेश्वर रूप श्रीगुरु को मेरा प्रणाम हो।।६३।।

घोर संसार कान्तार समुत्तारैकहेतवे।
नमस्ते चित्स्वरूपाय शिवाय गुरवे नमः।।६४।।

संसार रूप महाभीषण घने जंगल से बाहिर पार लगाने में एकमात्र समर्थ चित्स्वरूप श्रीगुरु रूपी शिव को मेरा बारंबार प्रणाम।।६४।।

अहंममेति, विच्छन्नमदौघोऽज्ञानवारणः।
निहतो लीलया येन गुरुसिंहं नमामि तम्।।६५।।

जिस गुरु रूपी शेर ने "मैं और मेरा" अर्थात् अहं और मम इस भावरूप मदसेमस्त अज्ञान रूपी हाथी को खेल-खेल में ही मार डाला उसी गुरुरूपी शेर को मैं प्रणाम करता हूँ।।६५।।

विशेष : स्मरण रहे कि 'मम' की घनीभूत भावना ही संसार के सारे उपद्रवों की जड़ है। इसीलिए शैवी गुरुओं ने बार-बार साधकों को यह उपदेश दिया है कि "मम" से पूर्व साधारण 'न' वर्ण जोड़ने से सारी चिन्तन प्रक्रिया में बदलाव आता है।। अर्थात् "न मम न मम" को कहते रहने से 'विशुद्धि चक्र' जागृत होता है और श्रीगुरु का आस्पद "आज्ञाचक्र" उल्लसित होता है।।

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै इष्टदेव स्वरूपिणे।
यस्य वाक् अमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम्।।६६।।

इष्टदेव की प्रतिमूर्ति उस श्रीगुरु को मेरा प्रणाम हो, जिसके उपदेश रूपी अमृत से संसार नामक विष (जहर) का नामो-निशान भी नहीं रहता है। अर्थात् संसार के विभिन्न प्रलोभनों का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता।। ६६।।

कोटि कोटि महादानात्कोटि कोटिमहाव्रतात्।
कोटिकोटि महायज्ञात्, परा श्री पादुकास्मृतिः।। ६७।।
कोटिमंत्रजपात्कोटि, पुण्य तीर्थावगाहनात्।
कोटिदेवार्चनात्देवि, पराश्रीपादुकास्मृति।। ६८।। (युगलम्)

भगवान् शिव भगवती शिवा से कहते हैं कि हे देवी ! (इस संसार में) करोड़ों श्रेष्ठ दानों से, करोड़ों श्रेष्ठ व्रतों के अपनाने से,

करोड़ों महान् यज्ञों के अनुष्ठानों से, करोड़ों की संख्या में विशेष मन्त्रों का जप करने से असंख्य पुण्य प्रदान करने वाले तीर्थस्थानों पर स्नान आदि करने से, और करोड़ों देवताओं की पूजा करने से भी सर्वश्रेष्ठ श्रीगुरु की पादुकास्मृति है।।६७-६८।।

सकृत्श्री पादुकां देवि! योवा जपति भक्तितः।
स सर्वपापरहितः प्राप्नोति परमां गतिम्।।६९।।

हे देवी ! जो साधक एक बारगी श्रीगुरु की पादुका का भक्ति से मनन करता है, वह सारे पापों से मुक्त होकर परमगति को प्राप्त करता है।।६९।।

श्रीस्वामिचरणाम्बोजं यस्यां दिशि विराजते।
तस्यै दिशे नमस्कुर्याद्भक्त्या प्रतिदिनं प्रिये!।।७०।।

हे पार्वती ! श्रीगुरु के चरण कमल जिस दिशा में विराजमान रहते हैं उस दिशा को प्रतिदिन भक्ति से प्रणाम करे।।७०।।

गुरुमूला क्रियाः सर्वा लोकेऽस्मित्कुलनायिके!।
तावत्सेव्यो गुरुर्नित्यं सिद्धचर्थं भक्तिसंयुतैः।।७१।।

हे कुल-संप्रदाय की महारानी। इस संसार में सारी क्रियायें श्रीगुरु की ही आधारभूता हैं अतः भक्तिमान साधकों को लक्ष्य प्राप्ति तक श्री गुरु की सेवा सदा करनी चाहिए।।७१।।

तावत्भ्रमति संसारे सर्वदुःखवशीकृतः।
यावत्नआयाति शरणं श्रीगुरुं भक्तिवत्सलम्।।७२।।

इस संसार में अनेक दुःखों से पराधीन बना हुआ जीव तब तक भटकता रहता है जब तक भक्तिवत्सल (प्रिय) श्रीगुरु की शरण में

नहीं आता है।।७२।।

तावत्आशोधयेत्शिष्यः सुप्रसन्नो यथा गुरुः।
गुरौ प्रसन्ने शिष्यस्य सद्यः पापक्षयोभवेत्।।७३।।

तब तक शिष्य ध्येय प्राप्ति के लिए सदा प्रयत्नशील रहें जब तक श्रीगुरु प्रसन्न न हों। श्रीगुरु के सन्तुष्ट होने पर ही शिष्य के सारे पापों का तत्क्षण विनाश होता है।।७३।।

यदिवा परितुष्टेन गुरुणा यत्रकुत्रचित्।
मुक्तोऽसीति समादिष्टः शिष्यो मुक्तो भवेत्प्रिये।।७४।।

अथवा निष्प्रपञ्चेन धाम्ना केनचिदीश्वर।
करोमि गुरुरूपेण पशुपाशविमोचनम्।।७५।। (युगलम्)

हे पार्वती ! प्रसन्नात्मा श्री गुरु ने जहां कहीं या जब कभी शिष्य को यह बताया कि "तू मुक्त हो" तो समझना कि शिष्य उसीक्षण मुक्त होता है। क्योंकि शैवयोगी श्रीगुरु का सामान्य वाक्य भी ब्रह्मवाक्य होता है। हे देवी! या किसी मायारहित ऊर्जास्पद स्थान से मैं ही (भगवान् शिव ही) श्रीगुरु के रूप में सांसारिक जीवों को पशु पाश से मुक्त करके ऊर्ध्वगति प्रदान करता हूँ।।७४-७५।।

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाश्यन्ते महात्मनः।।७६।।

जैसी पराभक्ति किसी साधक को देवता पर होती हैं वैसी ही पराभक्ति यदि श्रीगुरु पर भी हो तो उस साधक के सारे मनवांछित अभिप्राय सफल होते हैं।।७६।।

गुरुभक्त्या यथा देवि! प्राप्यन्ते सर्वसिद्धयः।

यज्ञदानतपस्तीर्थव्रताद्यैर्न तथा प्रिये।।७७।।

हे देवी! हे प्रिये! श्री गुरुभक्ति से जैसी सारी सिद्धियां उपलब्ध होती हैं वैसी सिद्धियां यज्ञानुष्ठानों से, भूरि-भूरि दान दक्षिणा से, तपश्चर्या से, तीर्थस्थानों के पुण्य वर्धक दर्शन से और व्रतों के आचरण से प्राप्त नहीं होती हैं।।७७।।

किं तीर्थाद्यैर्महायासैः किं व्रतैः कायशोषणैः।
निर्व्याजसेवां देवेशि! भक्त्या कुर्वन्ति ये गुरौ।।७८।।

हे देवी ! जो लोग भक्ति से श्रीगुरु की निष्कपट सेवा करते हैं उन्हें आयासकारी भिन्न-भिन्न तीर्थस्थानों पर जाने की, शरीर को सुखाने वाले निराहार व्रतों के आचरण की कोई आवश्यकता नहीं होती है।।७८।।

कायक्लेशेन महता तपसा वापि यत्फलम्।
तत्फलं लभते देवि! सुखेन गुरुसेवया।।७९।।

हे देवी ! जो फल, एक साधक को कष्टदायक यमनियमों के पालन से अथवा बड़ी तपस्या करने से प्राप्त होता है, वही फल श्रीगुरु की सेवा से अनायास प्राप्त होता है।।७९।।

न योगो न तपो नार्चाक्रमः कोऽपि प्रणीयते।
अमाये कुलमार्गेऽस्मिन् भक्तिरेका विशिष्यते।।८०।।

इस मायामल से रहित कुलमार्ग में न योग की महत्ता है, ना ही तप करने का कोई महत्त्व है, न किसी पूजाक्रम का विधान है अपितु इस मार्ग में एकमात्र भक्ति का ही साम्राज्य है।।८०।।

गुरौ मनुष्यबुद्धिं च मंत्रे चाक्षरबुद्धिमान्।

प्रतिमासु शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत्।। ८१।।

जो साधक श्रीगुरु पर मनुष्य बुद्धि रखता है अर्थात् श्रीगुरु को सामान्य मानव मानकर उसी रीति से उसका आदर सत्कार करता है, जो साधक श्रीगुरु द्वारा प्रदान किये गये मन्त्रों की महत्ता को न समझकर उन्हें साधारण वर्ण समूह ही समझता है, तथा जो साधक देव प्रतिमाओं की अनिर्वचनीय महत्ता को न समझकर उन्हें सामान्य पत्थरों का टुकड़ा मानता है, ऐसा साधक निश्चय करके नरक को प्राप्त करता है।।८१।।

गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः।
शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।।८२।।

श्रीगुरु ही पिता माता और देवता कहा गया है श्रीगुरु ही परमगति है। शिव के रूठने पर गुरु ही शरण देता है पर गुरु के रूठने पर कोई सहायक नहीं होता है।।८२।।

गुर्वर्थं धारयेत् देहं तदर्थं च धनं जयेत्।
निजप्राणान्परित्यज्य गुरुकार्यं समाचरेत्।।८३।।

श्रीगुरु की सेवा के लिये ही शरीर को धारण करे, श्रीगुरु की देखभाल करने के लिये ही धन कमाये और अपने प्राणों की भी परवाह न करके अर्थात् अपने प्राणों को भी यदि न्योछावर करना पड़े, श्रीगुरु के कार्य को निभाना चाहिये।।८३।।

गुर्वाग्रे न तपः कुर्यान्नोपवासादिकं व्रतम्।
तीर्थयात्रां च नो कुर्यात्नआप्नुयादात्मशुद्धये।।८४।।

श्रीगुरु के सामने शिष्य तपस्या न करे, श्रीगुरु के सामने कोई

निराहार उपवास आदि तथा न कोई अष्टमी आदि व्रत रखे, ना ही कोई तीर्थयात्रा करे, और ना ही आत्मशुद्धि के लिए प्रयत्न करे।।८४।।

गुरौ सन्निहिते यस्तु पूजयेत् अन्यं ईश्वरि!।
स याति नरकं घोरं सा पूजा निष्फला भवेत्।।८५।।

हे देवी ! जो साधक अपने श्रीगुरु के समीप रहने पर किसी दूसरे गुरु को पूजे, वह साधक घोर नरक को प्राप्त करता है और उसकी पूजा निष्फल होती है।।८५।।

दर्शनार्थं गुरौ गच्छन् शिष्य शुश्रूषुरम्बिके!।
पदे पदेऽश्वमेधस्य फलमाप्नोति नित्यशः।।८६।।

हे देवी ! श्रीगुरु की सेवा का इच्छुक शिष्य श्रीगुरु के दर्शन के लिए जब प्रस्थान कर रहा हो तो वह सदा कदम-कदम पर अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है।।८६।।

केवलं गुरुशुश्रूषा मत्कृपाकारिणी प्रिये!।
सद्भक्तिसहिता सा च सर्वकाम फलप्रदा।।८७।।

हे प्रिये ! शिव की कृपा केवल श्रीगुरु की सेवा से ही प्राप्त होती है। शुद्ध भक्ति से की गई वह सेवा सारी कामनाओं को संपूर्ण करने वाली है।।८७।।

क्षीयन्ते सर्वपापानि वर्धन्ते पुण्यराशयः।
सिद्धयन्ते सर्वकार्याणि सद्गुरोर्दर्शनात्प्रिये।।८८।।

हे प्रिये! श्रीगुरु के दर्शनमात्र से ही सारे पाप क्षीण होते हैं, पुण्यों की राशि बढ़ती जाती है और सारे कार्य सिद्ध होते हैं।।८८।।

श्री गुरोःअर्चनं पूजा गुरोर्नामस्मृतिर्जपः।
सर्वाज्ञाकरणं कृत्यं शुश्रूषा भजनं गुरौ।।८९।।

श्रीगुरु की अर्चना ही बड़ी पूजा है, श्रीगुरु का नाम स्मरण ही बड़ा जप है, श्रीगुरु की आज्ञा का संपूर्ण रूप से पालन ही श्रेष्ठ कर्म है, और श्रीगुरु की सेवा ही उनका भजन है।।८९।।

विनोपचारं नो तिष्ठेत् गुर्वाग्रे नेच्छया विशेत्।
मुखावलोकी सेवेत तदुक्तं च समाचरेत्।।९०।।

श्रीगुरु के सामने बिना उपचार के न ठहरिये, श्रीगुरु के सामने अपनी इच्छा से न बैठिये, केवल श्रीगुरु के मुख की ओर ही देखते रहकर उनकी सेवा करे और उनके मुख से निकले हुए शब्दों का पूर्ण रूप से पालन करे।।९०।।

सत् असत् यत् गुरुः ब्रूयात् तत्कार्यं अविशंकया।
निग्रहेऽनुग्रहे वापि गुरुरेव हि कारणम्।।९१।।

श्रीगुरु युक्तियुक्त वचन बोले अथवा अयुक्त वचनों का प्रयोग करे, बिना किसी शंका के शिष्य को उनका पालन करना चाहिए। क्योंकि कृपा करने में या शाप देने में श्रीगुरु ही एकमात्र कारण है।।९१।।

गच्छन् तिष्ठन् स्वपन् जाग्रन् जपन् जुह्वन् प्रपूजयेत्।
गुर्वाज्ञां एव कुर्वीत तद् गतेन अन्तरात्मना।।९२।।

जाते हुए, ठहरते हुए, सोते हुए, जागते हुए, जप करते हुए, यज्ञ में आहुति डालते हुए, उनका ही ध्यान मन में रखकर उनकी पूजाकरे, श्रीगुरु की अन्तरात्मा से एक होकर के उनकी आज्ञा का ही सदा पालन करे।।९२।।

सर्वदा निवसेत् भक्त्या शिष्यः श्रीगुरुसन्निधौ।
छायाभूमिपरित्यागी न इतरःतु अतिभक्तिमान्।। ९३।।

श्रीगुरु की छाया जहां तक पड़े उस स्थान का लंघन नहीं करना, जिस जगह उनका आसन विराजमान हो उस स्थान से भी दूर रहना। अत्यन्त भक्तिमान् शिष्य श्री गुरु से सान्निध्य में सदा भक्ति से वास करे। जिसका व्यवहार इससे विपरीत हो वह श्रीगुरु के सान्निध्य का पात्र नहीं हो सकता।।९३।।

अधः स्थे तु गुरौऊर्ध्वे न तिष्ठेत्तु कदाचन।
न गच्छेत्अग्रतस्तस्य न विशेत्उत्थिते गुरौ।। ९४।।

श्रीगुरु यदि नीचे (भूमि पर) विराजमान हो तो शिष्य कभी ऊंचे स्थान पर न बैठे। शिष्य कभी श्रीगुरु के सामने से न गुजरे ना ही श्रीगुरु के उठने पर नीचे बैठे।।९४।।

विषमे वा समे वापि स्थाने तिष्ठन्तमीश्वरि।
श्रीगुरुं न त्यजेद्देवि! तदातिष्ठेत्व्रजेत्ततः।। ९५।।

हे देवि ! हे सामर्थ्यशालिनी ! श्रीगुरु चाहिए किसी विषम स्थान (जो स्थान रहने के योग्य न हो या जिस स्थान का वातावरण अनुकूल न हो) या किसी सम स्थान पर (जो रहने के योग्य प्रत्येक प्रकार से हो) ठहरे हुए हों तो उनको अकेले वहां न छोड़े। उनके उठने पर ही उठे और उनके जाने पर ही चले।।९५।।

किं बहूक्तेन देवेशि! सद्गुरुः परमेश्वरः।
तत्सेवैव परं कार्या भक्त्या प्राणैर्धनैरपि।। ९६।।

हे देवेश्वरी! अधिक कहने से क्या? श्री गुरु ही साक्षात् परमेश्वर

है। भक्ति से प्राणों से (अर्थात् अपने प्राण भी यदि दांव पर लगाने पड़े तो हिचकिचाना नहीं) तथा अपनी धन सम्पति से श्रीगुरु की परम सेवा करनी चाहिए।।९६।।

संसारजनकारुण्यात्दयया परमेश्वरः।
गुरुरूपेण सर्वत्र स्थितो नास्त्यत्र संशयः।।९७।।

सांसारिक लोगों पर करुणाभाव दिखाने के लिए तथा उन पर दया करने की इच्छा से, परमेश्वर श्रीगुरु के रूप में स्वयं ही– सर्वत्र विराजमान होते हैं। इसमें दो राय नही।।९७।।

कियत्वक्ष्यामि ते भद्रे माहात्म्यं सद्गुरोः परम्।
गुरुभक्तिविहीनानां न मुक्तिर्बहुजन्मभिः।।९८।।

हे कल्याणकारिणी देवी ! मैं श्रीगुरु का परम माहात्म्य आप से कितना बखान करूंगा। पर इतना कहे देता हूँ कि श्रीगुरु की भक्ति से रहित साधकों को अनेक जन्मों में भटकने पर भी मुक्ति से हाथ धोना पड़ेगा।।९८।।

इहलोके भोगसिद्धिर्परत्र स्वर्गमुक्तिभूः।
गुरुभतत्चैव देवेशि! नान्या पन्था इति श्रुतिः।।९९।।

हे ईश्वरि ! श्रीगुरु की भक्ति से ही इस लोक में सारे भोगों को भोगोगे और परलोक में स्वर्ग प्रासि के साथ-साथ मुक्ति का भी पात्र बनोगे।।९९।।

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं सुशोभितम्।
वरं च वामहस्तेन तत्त्वमुद्रां च दक्षिणे।।१००।।

बायां हाथ वरमुद्रा और दाहिना हाथ तत्त्व मुद्रा से सुशोभित बना

हुआ, श्वेतवस्त्रधारी, सर्व व्यापक चन्द्र सा सफेद दिखने वाले श्री गुरु को प्रणाम हो।।१००।।

अमलविमलगात्रं ज्योतिरेक प्रकाशम्।
प्रभवविभव साक्षी सच्चिदानन्द रूपम्।।
समरसस्वस्वभावं क्षेममानन्द नित्यम्
सकलभुवनवासं सद्गुरुं तं नमामि।। १०१।।

अत्यन्त निर्मल शरीर वाले, अपनी ज्योति से सब कुछ प्रकाशित करने वाले, उत्पत्ति और स्थिति के साक्षी, सत् चिद् आनन्द स्वरूप सुख दुःख में एक समान, अपने संवित् स्वभाव में सदा रहने वाले, कल्याणकारी, नित्यानन्दमय, और ११८ भुवनों में वास करने वाले श्रीगुरु को मैं प्रणाम करता हूँ।।१०१।।

सहस्त्रदल पङ्कजे सकल शीतरश्मि प्रभम्।
वराभय कराम्बुजं विमलगंध पुष्पाम्बरम्।।
प्रसन्नवदनेक्षणं सकल देवतारूपिणम्।
स्मरेतशिरसि संततंतदभिधानपूर्वं गुरुम्।।१०२।।

चन्द्रमा के शीतल किरणों के समान शान्तिदायक, अपने कर-कमलों में वर और अभय की मुद्रा दिखाने में तत्पर, निर्मल सुगन्ध से सुगन्धित फूलों के वस्त्रों से शोभित, प्रसन्न मुख और नेत्रों वाले, सारे देवताओं के स्वरूप को धारण किये श्रीगुरु का पहले उनका श्री नाम लेते हुए हजार पंखुडियों वाले कमलाकार सहस्त्रार चक्र में, स्मरण करता हूँ।।१०२।।

निःसक्त मणि पादुकानियमिताघकोलाहलं
स्फुरत्किसलयारुणं नखसमुल्लसच्चन्द्रकम्।

परामृतसरोवरोद्यत सरोजमद्गोचिषम्
भजामि शिरसिस्थितं गुरुपदार बिन्दद्वयम्।। १०३।।

श्रेष्ठ अमृत के सरोवर में विकसित कमल सी कान्ति वाले छोटे-छोटे लाल पत्तों जैसे लाल नाखूनों पर चन्द्रिकाओं (छोटे-छोटे चांद जैसे) का आभा मण्डल प्रकट करने वाले चरण पादुका पर लगे रत्नों से सारे पापों के बखेड़े को शान्त करने वाले आज्ञा चक्र में स्थित श्रीगुरु के उन दोनों चरण कमलों का ध्यान करता हूँ।।१०३।।

श्रीनाथादिगुरुत्रयं गणपतिं
पीठत्रयं भैरवम्।
सिद्धेभ्यो वटुकत्रयं पदयुगं
दूतीक्रमं शाम्भवम्।।
वीरश्चाष्टचतुष्टषष्टिनवकं
वीरावली पञ्चकम्।
श्रीमन्मालिनि मंत्रराज सहितं
वन्दे गुरोर्मण्डलम्।।१०४।।

इति श्रीकौलार्णवे महातंत्रे
श्रीगुरुगीता समाप्तेतिशिवम्

इस श्लोक में परम्परागत सद्गुरु मण्डल के माननीय सिद्धों, वीरों, वीरेशों आदि का जो अनुग्रह के एकमात्र कारण है, उल्लेख किया गया है। इस श्रीगुरु गीता के पाठ पर तथा श्रीगुरु पूजा पर मैं इन सिद्धगुरुओं की वन्दना करता हूँ तथा उन्हें धन्यवाद देता हूँ :–

श्रीनाथादि गुरुत्रयं से तात्पर्य है श्री सत्यानन्द नाथ, श्री ज्ञानानन्द नाथ और श्री पूर्णानन्दनाथ नाम के तीन गुरु सिद्धौघ हैं।

गणपतिं–इस से मन अभिप्रेत है।

पीठत्रयं से कामाख्य पीठ, जालन्धर पीठ आदि अभिप्रेत हैं। भैरवं से कालभैरव का उल्लेख है। सिद्धेभ्यः से सिद्धगुरुओं की ओर संकेत है।

वटुकत्रयं से श्री गणेश, कार्तिकेय और वटुक भैरव का उल्लेख है। पदयुगं से श्री गुरु के दो चरण कमलों की ओर जो प्रकाश विमर्शरूप हैं, संकेत है,

दूती क्रमं शाम्भवं – शैवयोग में दूतियों का अपना एक विशेष स्थान है जिनका गुरुमण्डल के साथ अभिन्न सम्बन्ध है। वीरः वे होते हैं जो गुरु वीर्यवान और मदोत्कट होते हैं। अष्ट से ब्राह्मी, माहेश्वरी, ऐन्द्री, कौमारी, दुर्गा, वैष्णवी आदि आठ मातृकाओं का निर्देश है। चतुष्टषष्टि से चौंसठ योगनियों का मण्डल अभिप्रेत है। नवक से "ह् स् र् क्ष् म् ल् व् य् ॐ" नवात्मक मन्त्रस्वरूप श्री आनन्दभैरव अभिप्रेत है वीरावली पंचकम् वीरेशों की (त्रितयभोक्ता वीरेशः) क्रमात्मकता और पांच रुद्रों की शक्तियां कही गई हैं।

श्रीमन्मालिनी–अकथनीय वैभवशाली मालिनी "हीं नफ हीं मालिन्यै नमः" मालिनी के इस मन्त्र को मन्त्रराज कहते हैं। "नादि फान्ता मालिनी" मन्त्र के गोलाकार क्रम में अर्थात् न से आरंभ करके फ तक सारे अक्रमात्मक स्वर व्यञ्जनात्मक पचास वर्ण समुदाय "न ऋ ॠ ऌ ॡ थ च ध ई ण उ ऊ ब क ख ग घ ङ इ अ व भ य ड ढ ठ झ ञ ज र ट प छ ल आ स : ह ष क्ष म श ं त ए ऐ ओ औ द फ"

मालिनी के अन्तर्गत ही उपरोक्त गुरुओं, सिद्धों, भैरवों योगनियों मातृकाओं रुद्रों और वीरेशों का अपना-अपना विशेष स्थान है

और इसी गुरु मण्डल को मैं प्रणाम करता हूँ।।

यह अतीव रहस्यात्मक मन्त्रराज है क्योंकि इसी में साढ़े सात करोड़ मन्त्रों का स्वरूप अन्तर्हित है। शैवयोगियों के प्राणस्वरूप इस मालिनी मन्त्रराज की व्याख्या करने में शैवदर्शन केसरी आचार्य अभिनवगुप्त ने भी चुप्पी साधी है इसीलिए मालिनी विजयोत्तरतन्त्र जैसा शीर्षस्थ कश्मीर शैवदर्शनग्रन्थ वर्तमान स्वरूप में ही सीमित रहा।

जय गुरुदेव